सम्पादकीय

भारत की उच्च शिक्षा प्रणाली: विस्तार, गुणवत्ता और समानता का द्वंद्व

भारत में उच्च शिक्षा के क्षेत्र में गुणवत्ता और पहुँच (Quality and Access) आज सबसे महत्वपूर्ण और समसामयिक मुद्दों में से एक हैं। हाल के वर्षों में सकल नामांकन अनुपात (GER) में वृद्धि अवश्य हुई है, परंतु यह वृद्धि शिक्षा की वास्तविक गुणवत्ता के समानांतर नहीं है। अनेक उच्च शिक्षण संस्थानों में योग्य शिक्षकों की कमी, शोध-आधारित शिक्षण का अभाव, पुराना पाठ्यक्रम, तथा उद्योग और शिक्षा के बीच कमजोर समन्वय जैसी समस्याएँ बनी हुई हैं। इसके परिणामस्वरूप बड़ी संख्या में स्नातक छात्र रोजगार-योग्यता (employability) की दृष्टि से अपेक्षित स्तर तक नहीं पहुँच पा रहे हैं।

दूसरी ओर, समान और समावेशी पहुँच भी एक गंभीर चुनौती है। ग्रामीण क्षेत्रों, आदिवासी अंचलों, आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों, महिलाओं और दिव्यांग छात्रों के लिए उच्च शिक्षा तक पहुँच अब भी सीमित है। डिजिटल शिक्षा के विस्तार ने नए अवसर खोले हैं, किंतु डिजिटल डिवाइड के कारण सभी वर्ग इसका समान लाभ नहीं उठा पा रहे हैं।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति 2020 (NEP-2020) ने बहुविषयक शिक्षा, लचीली प्रवेश-निकास व्यवस्था, शोध-संस्कृति के विकास और संस्थागत स्वायत्तता पर बल देकर इन समस्याओं के समाधान की दिशा में एक ठोस रूपरेखा प्रस्तुत की है। फिर भी, नीति के प्रभावी क्रियान्वयन, पर्याप्त वित्तपोषण और संस्थागत सुधारों के बिना गुणवत्ता और पहुँच के बीच संतुलन स्थापित करना एक दीर्घकालिक चुनौती बना रहेगा।

उच्च शिक्षा के क्षेत्र में समानता का द्वंद्व एक जटिल और बहुआयामी समस्या के रूप में उभरता है। एक ओर राज्य और नीति-निर्माता सभी वर्गों के लिए शिक्षा को समान रूप से सुलभ बनाने का प्रयास करते हैं, वहीं दूसरी ओर सामाजिक, आर्थिक और भौगोलिक असमानताएँ इस लक्ष्य को चुनौती देती हैं। समान अवसर की अवधारणा तब अधूरी प्रतीत होती है जब प्रवेश की समानता तो उपलब्ध हो, परंतु संसाधनों, मार्गदर्शन और गुणवत्ता तक पहुँच समान न हो।

ग्रामीण, आदिवासी और आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के विद्यार्थियों को औपचारिक रूप से उच्च शिक्षा में प्रवेश तो मिल जाता है, किंतु भाषा-अवरोध, डिजिटल संसाधनों की कमी और शैक्षणिक पृष्ठभूमि की असमानता उनके लिए उच्च शिक्षा को वास्तविक रूप से समान नहीं रहने देती। इस स्थिति में समानता प्रायः सांख्यिकीय उपलब्धि

मात्र बनकर रह जाती है, जबकि सार्थक सहभागिता और शैक्षणिक सफलता सीमित वर्गों तक सिमट जाती है।

यह द्वंद्व इस प्रश्न को जन्म देता है कि क्या समानता का अर्थ सबको एक समान अवसर देना है या सबको उसकी आवश्यकता के अनुरूप समर्थन उपलब्ध कराना। जब तक नीति और संस्थागत ढाँचे इस अंतर को नहीं समझते, तब तक उच्च शिक्षा में समानता एक आदर्श बनी रहेगी, वास्तविकता नहीं।

प्रस्तुत अंक का प्रथम लेख डॉ. सूर्यवीर सिंह द्वारा आंग्ल भाषा में रचित है। यह लेख अठारहवीं सदी के मारवाड़ के एक कॉस्मोग्राम की शानदार और विद्वत्तापूर्ण व्याख्या करता है, जिसमें कला इतिहास, पौराणिक ब्रह्मांड विज्ञान और दर्शन को सहजता से बुना गया है। कठोर पाठ्य सहसंबंध और संवेदनशील दृश्य विश्लेषण के माध्यम से, यह पेंटिंग को एक पवित्र आरेख के रूप में दिखाता है जहाँ ज्यामिति, भक्ति और आध्यात्मिक अंतर्दृष्टि एक साथ मिलती हैं, जो भारतीय कला को केवल प्रतिनिधित्व के बजाय ब्रह्मांडीय बोध के एक तरीके के रूप में फिर से स्थापित करता है।

द्वितीय लेख राजस्थान के विशेष संदर्भ में सतत् पर्यटन का एक स्पष्ट और पूर्ण जानकारी वाला एनालिसिस देता है। डॉ. मदन लाल जांगिड़ का यह लेख हेरिटेज साइट्स, पॉलिसी फ्रेमवर्क और ग्लोबल स्टैंडर्ड्स को मिलाकर, यह मज़बूती से बताता है कि टूरिज्म कैसे पर्यावरण संरक्षण, सांस्कृतिक संरक्षण और स्थानीय आर्थिक विकास को स्थायी और ज़िम्मेदार तरीके से संतुलित कर सकता है।

तीसरा आलेख प्रो. जी.एस.एल. देवड़ा की महत्वपूर्ण शोधपरक रचना है। प्रस्तुत आलेख लाखी (लक्खी) जंगल के इतिहास को पर्यावरण, भूगोल और राजनीति के अंतर्संबंधों के माध्यम से विश्लेषित करता है। लेखक ने प्राचीन 'महाबन' से लेकर औपनिवेशिक काल तक जंगल के विस्तार, क्षरण और विनाश की प्रक्रिया को साक्ष्य-आधारित ढंग से प्रस्तुत किया है। नदियों के मार्ग परिवर्तन, नईवालों की भूमिका, सैन्य अभियानों और राज्य की नीतियों को जंगल के पतन का मुख्य कारण बताया गया है। यह अध्ययन स्पष्ट करता है कि पर्यावरणीय परिवर्तन केवल प्राकृतिक नहीं, बल्कि राजनीतिक और आर्थिक हस्तक्षेपों का परिणाम भी होते हैं।

चतुर्थ आलेख डॉ. अम्बेडकर के दलित-समर्थक सामाजिक-राजनीतिक दर्शन का ऐतिहासिक और वैचारिक विश्लेषण प्रस्तुत करता है। प्रो. एस.के. भनोत ने वर्ण-व्यवस्था, धार्मिक आंदोलनों और औपनिवेशिक प्रभावों की पृष्ठभूमि में बी.आर. अम्बेडकर के मानवतावादी चिंतन को स्पष्ट, शोधपरक और तार्किक रूप में रेखांकित किया है।

अगला आलेख डॉ. मनीष श्रीमाली द्वारा लिखा गया है। इस आलेख के माध्यम से लेखक ने मीराँबाई के जीवन, भक्ति और नाम से जुड़े विवादों का विस्तृत, तथ्यपरक एवं आलोचनात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया है। शोधपरक दृष्टि से यह मीराँ संबंधी ऐतिहासिक, साहित्यिक और भाषिक मतभेदों को समेटते हुए संत परंपरा में उनके विशिष्ट स्थान को प्रभावी ढंग से रेखांकित करता है।

विक्रम सिंह द्वारा रचित यह लेख तनसिंह के सामाजिक, राजनीतिक और साहित्यिक योगदान का व्यापक व तथ्यात्मक मूल्यांकन प्रस्तुत करता है। गुणात्मक ऐतिहासिक-जीवनी दृष्टि, प्रामाणिक स्रोतों और साक्षात्कारों के आधार पर यह अध्ययन उनके नेतृत्व, नैतिक मूल्यों और समाज-सुधारक व्यक्तित्व की प्रासंगिकता को प्रभावी रूप से उजागर करता है।

शाइस्ता द्वारा लिखित यह शोध-पत्र अमेरिकी सैन्य अड्डों को केवल सामरिक ढाँचे के रूप में नहीं, बल्कि सांस्कृतिक और सामाजिक प्रभावों के केंद्र के रूप में विश्लेषित करता है। केस-स्टडी और सैद्धांतिक दृष्टि के संतुलित प्रयोग से यह लेख वैश्विक शक्ति, स्थानीय एजेंसी और सांस्कृतिक अंत:क्रिया की जटिलताओं को प्रभावी ढंग से उजागर करता है।

डॉ. ज़फर उल्लाह खाँ का यह आलेख गुप्तकालीन मुद्राओं के संरक्षण, वर्गीकरण और अध्ययन को तकनीकी व ऐतिहासिक दृष्टि से प्रस्तुत करता है। विशेषत: मंदारिन लिपि में अंकित वर्षों की नवीन व्याख्या इसे शोध की दृष्टि से महत्वपूर्ण बनाती है। यह लेख भारतीय मुद्राशास्त्र में नए विमर्श की संभावनाएँ खोलता है।

डॉ. कौशल्या सोलंकी द्वारा लिखित यह आलेख विजय सिंह पथिक के क्रांतिकारी जीवन और साहित्यिक योगदान का सम्यक् परिचय प्रस्तुत करता है। विशेषत: बिजोलिया आंदोलन में उनकी भूमिका तथा राष्ट्रीय चेतना से ओत-प्रोत काव्य का प्रभाव प्रभावी ढंग से उभरता है। तथ्यों की प्रचुरता इसकी शक्ति है, यद्यपि भाषा में संक्षिप्तता अपेक्षित थी।

पत्रिका में पिछले अंक से '**स्मृति लेख**' नामक एक नया अनुभाग जोड़ा गया है। इसके अंतर्गत *विश्वम्भरा* पत्रिका में पूर्व में प्रकाशित, महत्वपूर्ण एवं वर्तमान में दुर्लभ हो चुके आलेखों को पुन: प्रकाशित करने की योजना है। इसी क्रम में इस बार प्रस्तुत आलेख भवानी लाल भारतीय की रचना है। यह लेख विश्वम्भरा पत्रिका के 2001 के अंक में छप चुका है, परन्तु इसकी गुणवत्ता को देखते हुए नई शोधार्थी पंक्ति के लिए पुन: प्रकाशित किया गया है। भवानी लाल जी विश्वम्भरा पत्रिका के संपादक मंडल के सदस्य भी रह चुके हैं।

भवानी लाल भारतीय का यह आलेख वैदिक पुरुषार्थवाद और सार्वभौम मानवतावाद का व्यापक, शास्त्रसम्मत तथा ओजस्वी विवेचन प्रस्तुत करता है। लेखक ने वेदों के मंत्रों के प्रामाणिक उद्धरणों के माध्यम से धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष के संतुलित समन्वय को स्पष्ट किया है। गृहस्थाश्रम, राष्ट्रभावना, सामाजिक समरसता और सार्वजनीन दृष्टि का विवेचन इसे समकालीन वैचारिक विमर्श में अत्यन्त प्रासंगिक और मूल्यवान बनाता है।

इस अंक में सम्मिलित आलेखों की समीक्षा निम्नलिखित विषय विशेषज्ञों द्वारा की गई- डॉ. हेमेन्द्र चौधरी, विभागाध्यक्ष, इतिहास विभाग, जनार्दन राय नागर राजस्थान विद्यापीठ, उदयपुर (राजस्थान); डॉ. कुलवंत सिंह शेखावत, सहायक आचार्य, इतिहास विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय, जयपुर (राजस्थान); डॉ. विक्रम सिंह अमरावत, इतिहास एवं संस्कृति विभाग, गूजरात विद्यापीठ, अहमदाबाद (गुजरात); डॉ. मनीष श्रीमाली, सहायक आचार्य, इतिहास विभाग, मोहन लाल सुखाड़िया विश्वविद्यालय, उदयपुर (राजस्थान) तथा श्री अजय सिंह, पुरालेखपाल, दिल्ली अभिलेखागार, नई दिल्ली।

उक्त सभी विद्वज्जनों ने निर्धारित समयावधि में आलेखों की समीक्षा कर अपने बहुमूल्य सुझाव उपलब्ध कराए, जिसके लिए हम उनके प्रति तथा संपादक मंडल के आदरणीय सदस्यों के प्रति हार्दिक कृतज्ञता व्यक्त करते हैं। हमें दृढ़ विश्वास है कि आगामी समय में भी आपका सहयोग इसी समर्पण, उत्साह और निष्ठा के साथ निरंतर प्राप्त होता रहेगा।

आदरणीय पाठकवृन्द, आपके सारगर्भित सुझावों एवं शोधोन्मुख आलेखों से ही हमारी पत्रिका को वैचारिक नवीनता और अकादमिक गहराई प्राप्त होती है। आपसे विनम्र निवेदन है कि अपने श्रेष्ठ शोध, आलेख एवं समीक्षात्मक टिप्पणियाँ हमें प्रेषित करते रहें, जिससे पत्रिका का प्रकाशन क्रम सतत, सुसंगठित और गुणवत्तापूर्ण बना रह सके।

संपादक